SHODH SAMAGAM

ISSN : 2581-6918 (Online), 2582-1792 (PRINT)

डॉ. बलदेव के छत्तीसगढ़ी काव्य लेखन का समीक्षात्मक अध्ययन

अलका यतीन्द्र यादव, Ph.D., हिंदी विभाग
पी.एन. एस. महाविद्यालय, बिलासपुर, छत्तीसगढ़, भारत

ORIGINAL ARTICLE

Author
अलका यतीन्द्र यादव, Ph.D.

shodhsamagam1@gmail.com

Received on : 15/02/2024
Revised on : -----
Accepted on : 16/04/2024
Overall Similarity : 03% on 08/04/2024

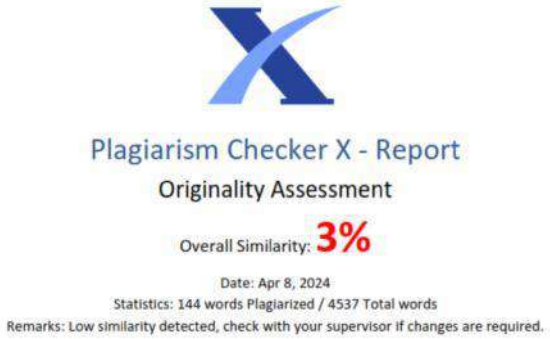

शोध सार

डॉ. बलदेव छत्तीसगढ़ के प्रमुख कवि हैं, जिनकी काव्य रचनाएँ छत्तीसगढ़ की सांस्कृतिक और सामाजिक विरासत को उत्कृष्टता से प्रस्तुत करती हैं। उनके काव्य में छत्तीसगढ़ के जीवन, लोककथाएं, परंपराएँ, और सामाजिक मुद्दे व्यापक रूप से प्रकट होते हैं। उनका काव्य साहित्य विशेष रूप से छत्तीसगढ़ की जनता की भावनाओं और जीवन–दर्शन को स्पष्टता से प्रकट करता है। उनकी काव्य रचनाओं में छत्तीसगढ़ी भाषा का प्रयोग उत्कृष्ट होता है। उनकी शैली सादगी, संवेदनशीलता, और स्थानिकता को प्रकट करती है। उनके काव्य में छत्तीसगढ़ की जीवन–दर्शन, परंपराएँ, और लोककथाएं मुख्यतः उल्लेखनीय होती हैं। उन्होंने समाज, संस्कृति, और इतिहास के विभिन्न पहलुओं को अपने काव्य में व्यक्त किया है। उनके काव्य में भावनाओं का गहराई से सामंजस्य होता है। वे अपनी कविताओं में प्रेम, श्रद्धा, विश्वास, और सामाजिक न्याय के विभिन्न रसों को प्रस्तुत करते हैं। डॉ. बलदेव के काव्य में स्थानीय साहित्यिक मूल्यों की उन्नति का प्रत्याशा किया जा सकता है। उनके काव्य में समाजिक और राष्ट्रीय विषयों का समावेश होता है, जो उनके काव्य को साहित्यिक महत्व का धरातल प्रदान करता है। उनके काव्य लेखन से छत्तीसगढ़ के लोगों में गर्व और प्रेरणा की भावना उत्पन्न होती है। उनकी कविताओं में सामाजिक सुधार, उत्थान और जागरूकता को बढ़ावा मिलता है। उनके काव्य के माध्यम से छत्तीसगढ़ की सांस्कृतिक धरोहर को संरक्षित रखने का महत्वपूर्ण योगदान है।

मुख्य शब्द

छत्तीसगढ़ी काव्य, छत्तीसगढ़ के जीवन, लोककथाएं, परंपराएँ, समाजिक–आर्थिक दशा.

प्रस्तावना

छत्तीसगढ़ अंचल के हिन्दी और छत्तीसगढ़ी के नामचीन हस्ताक्षर स्व. डॉ. बलदेव के अनुपम काव्य संग्रह 'वृक्ष में तब्दील हो गई औरत' का प्रथम खण्ड 'सूर्य किरण की छाँव में' एक स्वतंत्र संकलन के रूप में प्रकाशित हो चुका है। यह खण्ड अपने आप में पूर्ण है। इसमें हमें कवि की आत्मा से साक्षात्कार होने का सौभाग्य प्राप्त होता है। नवगीत, गीत, गीतिका और मुक्तक कविताओं की अनमोल धरोहर से युक्त इस संग्रह में कविवर का व्यक्तित्व, स्वभाव, भाषा के प्रति दृष्टिकोण, प्रकृति और माटी से लगाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होते है। विदित है, कोई भी रचनाकार अपनी श्रेष्ठतम रचना को ही संग्रह में प्रथम स्थान देता है। यहाँ भी डॉ. बलदेव ने कुल छत्तीस रचनाओं में से 'छलके मन मीत' गीत को प्रथम स्थान प्रदान किया है।

डॉ. बलदेव छत्तीसगढ़ी कविताओं में खाँटी देशीपन को महत्व देते हैं। उनमें लोकपरंपरा से जुड़ाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होती हैं। ठेठ देहाती अंदाज, लोकोक्ति मुहावरों की सौंधी महक, तद्भव और विदेशज शब्दों की मिलावट, कहीं विनम्र तो कहीं उग्र स्वभाव, बोझिलपन से दूर, लोक–बोली को समृद्ध करती हुई, शैली विविधता से युक्त, काव्यभाषा को यथोचित संस्कार प्रदान करने में वे सफल रहे हैं। डॉ. बलदेव की कविताओं की संख्या उनकी गद्य रचनाओं की तुलना में कुछ कम है, परंतु कविताओं में संपूर्ण जीवन क्षेत्र की व्यापकता निहित है। विषय की विविधता उनमें व्याप्त है।

शब्द समावेश

अंग्रेजी भाषा के कवि डब्ल्यू. एच. ऑडिन ने कहा है, कि–'प्ले विद द वर्ड'। इसका तात्पर्य हम यह समझते हैं कि शब्दों के साथ खेलो। कवि पहले शब्दों के विविध प्रयोगों के माध्यम से अर्थ की परतों को खोलता है, जो विविध आयामों में एक आकृति निर्मित करती जाती है।

डॉ. बलदेव के संदर्भ में देखें, तो उन्हें शब्दों के सही समय में सही प्रयोग की महारथ हासिल हो गई थी। वे मानवीय भावनाओं और संवेदनाओं को आकृति प्रदान करने में सक्षम थे। इनके छत्तीसगढ़ी काव्य संग्रह ''धरती सबके महतारी'' में चतुष्पदी का भी सुन्दर चित्रण मिलता है। प्रथम चतुष्पदी में छत्तीसगढ़ राज्य की कल्पना तिरंगे से की गई है, जो भारतवर्ष के शान में अभिवृद्धि करता है। अनेक कविताओं में शब्दों की तुकान्त योजना मनोहारी प्रतीत होती है। ''धरती सबके महतारी'' के 'गीत–4' में तुकांत योजना समझते हैं:

''गाँव गंवई के अंजोरी रात मन पूछ
सीटी मारत किंदरत हे जाड़ मत पूछ
कहूँ चलत हे दौरी कहुँ उड़ौनी
हुदरत कोचत रेंगत हे जाड़ मत पूछ''[1]

वे शब्दों के 'खेलन कवि' ठहरते हैं। ''दवंगरा'' शीर्षक कविता में अप्रचलित शब्दों को प्रचलन में लाने का गंभीर संचेत प्रयास किया गया है। दोंगरा या दवंगरा का शाब्दिक अर्थ है–'वर्षा की प्रथम बारिश'। 'दोंगराः पहिली बौछार' कविता में सांगरूपक और विराट बिम्ब का बेधड़क प्रयोग हुआ है:

''पहली असाढ़ के झंझाकुन
गगन घटा घहराइस
पहिले तो धुन के रूई कस जतर खतर अड़ियाइस
फेर सकला के एक जगा
बासुकि नाग के फन जइसन अड़ियाइस
अगिन रेखा बस जी म करै लपलप लपलप
रहिके–रहिके आँखी ले छुटे छिंट के चिनगारी।''[2]

आषाढ़ के मौसम में घनी काली घटाओं को धुनके रूई के समान संपूर्ण आकाश में बिखेर देना, पुनः उनका एकत्र होकर वासुकी नाग के समान बादलों का गरूआना, भकुना हांथी के सूँढ़ जैसा बादलों का घुमड़ना और विविध छंदों–अलंकारों का प्रयोग अद्‌भुत है ।

भाषा एवं प्रकृति तत्वों का निरूपण

डॉ. बलदेव जी की कविताएं विशुद्ध खड़ी बोली हिन्दी एवं छत्तीसगढ़ी में होती हैं। इस खण्ड में हम उनकी छत्तीसगढ़ी कविताओं की भाषा के संदर्भ में विचार करेंगे। विशुद्ध पूर्वीपन लिए हुए उनकी छत्तीसगढ़ी अत्यंत लचीली बोली है, जिसमें अंग्रेजी, ऊर्दू, उड़िया, बंगाली आदि कई भाषा के शब्द समाहित हो जाते हैं। 'श्रम सौन्दर्य की कविताएँ' में देखिए:

''कहूँ पिस्तौल कहूँ बन्दूक के नोंक
देवारी के रात अमावस के रात।''

छत्तीसगढी बोली अपनी मधुरता के लिए भी जानी जाती है। दयाशंकर शुक्ल लिखते है–''छत्तीसगढ़ी सरल धर्मभीरू, सरस, सौंदर्य प्रिय स्वरूप और भोले लोगों की बोली है।''[3] सरल हृदय डॉ. बलदेव की भावनाएँ छत्तीसगढ़ी को पाकर पुष्पित और पल्लवित हो उठी है। कविता– 'पहाड़ी किला मीलूपारा' में वे कहते हैं कि आदमी के हाथ–पाँव गेंदे के फूल के समान कोमल हैं लेकिन उन्हीं हाथों से बनी आकृतियाँ, सीढ़ी, खंभे, दरवाजे, किले आदि पत्थर की तरह कठोर होते हैं, कैसी विडंबना है।

भाषा की उत्पत्ति 'भाष' धातु से माना जाता है। इसके उत्पत्ति के संबंध में कोई निश्चित इतिहास तो नहीं है, किंतु यह स्पष्ट है कि भाषा का विकास शनैः–शनैः प्रयत्नों से ही हुआ है। लिपि इसको प्रदर्शित करने वाली सांकेतिक–ध्वनि है। सर्वविदित है कि भाषा तीन रूपों से अभिव्यक्त होती है–मौखिक, लिखित और सांकेतिक। भाषा अर्जित संपत्ति के रूप में सतत् प्रवाहमयी एवं सर्वव्यापक होती हैं। प्लेटो ने स्पष्ट किया है–''विचार आत्मा की मूक बातचीत है, पर वही जब ध्वन्यात्मक होकर होठों पर प्रकट होती है, तो उसे भाषा की संज्ञा देते हैं।''[4]

डॉ. भोलानाथ तिवारी जी ने भाषा की परिभाषा कुछ इस प्रकार दी है–''भाषा वह साधन है, जिसके माध्यम से हम सोंचते हैं तथा अपने विचारों को व्यक्त करते हैं।''5

उड़िया साहित्य और अंग्रेजी भाषा के भी समीक्षक श्री साहू रामनाथ जी ने डॉ. बलदेव की कविताओं की समीक्षा में लिखा है कि घुन, हार लाडू, लड़ाई–गुड़ी जैसी कविताओं के काव्यरूप एक तरह के लगते हैं। ये कविताएँ पूरी तरह से जनवादी तेवर लिए हुए हैं, जिनमें जमीन से जुड़े व्यक्ति की पीड़ा, उसकी अज्ञानता, अशिक्षा के कारण उसके ऊपर होने वाले शोषण का अन्याय को उजागर करती हैं। ये कविताएँ शोषित उपेक्षित वर्ग का पक्ष लेते हुए उन्हें रेखांकित करते हैं।

डॉ. बलदेव साव जी की भाषा में एक खुलापन सर्वत्र व्याप्त है। उनकी ध्वन्यात्मक अद्‌भुत लयबद्ध शैली और अपूर्व बिम्ब विधान शैली उनकी काव्यभाषा में चतुर्दिक शोभायमान है। ''उप्पर सन सनहवा चहत हे'' में गत्यात्मकता, ''देह छुवत बादर'' में स्पर्श के साथ–साथ ''घेरी–बेरी लउके हर लउके खिड़कावत हे'' कर्ण चक्षु का अद्‌भुत मेल दृष्टिगोचर होता है। काव्य में इस तरह के प्रयोग और सर्वथा भिन्न दृश्य विधान छत्तीसगढ़ के कुछ ही साहित्यकारों में ही उपलब्ध हो सकते हैं, जिनमें डॉ. बलदेव अग्रणीय है।

शैली वैविध्य

छत्तीसगढ़ के पं. सुंदरलाल शर्मा (2021) पुरस्कार प्राप्तकर्ता नंदकिशोर तिवारी जी एवं रामनाथ साहू जी जैसे विद्वानों ने उनकी शैली को छत्तीसगढ़ी काव्य साहित्य में सर्वथा नवीन बताया है। उनके काव्य में पाठक और श्रोताओं को नए नए प्रयोग और नवीन शिल्प विधान दृष्टिगोचर होते हैं। तिवारी जी ''भिनसार'' पर अपनी सूक्ष्म दृष्टि रखते हुए लिखते हैं– ''बिहान होय के बरन एखर ले बढ़िया अउ का हो सकत हे, मोर सोच के बाहिर हे। बूझात कंडिल

असन चंदा के दीखना अउ रखियात रखिया कस अंजोर फुटना। रखिया के ऊपर सफेद झाँई असन परथे तब वोहा बड़ी नइ त पेठा बनाय के लाइक होथे, वो ही ल 'रखियावत' कथे, त जइसे रखिया ह रखियावत हे, ठीक वोइसन हे अंजोर ह फरकत हे। दूसरे अरथ म चंदा ह ओहरत कंडिल के बाती असन अपन आप ल सूरज के अंजोर ल समर्पित करत हे।''[6]

इसी प्रकार ''हुद्राई'' शब्द का प्रयोग करके पूस की कड़कड़ाती ठण्ड को प्रस्तुत करना नवीन शैलीगत प्रयोग कह सकते हैं। व्यंगात्मक शैली, विवरणात्मक शैली एवं विचारात्मक शैली में वे अग्रणीय हैं। उनकी मूल्यांकन क्षमता स्तुत्य है। शब्द योजना और ध्वनि योजना की श्रेष्ठता उनके अनवरत अभ्यास का प्रतिफल कहा जा सकता है। प्रकरण योजना में वे सिद्धहस्त हैं।

बिम्ब विधान

डॉ. बलदाऊ प्रसाद निर्मलकर के मतानुसार ''बिम्ब योजना साहित्य का एक अभिन्न अंग है। इसके अभाव में साहित्य अधूरा लगता है। यह भावाभिव्यक्ति का उत्कृष्ट माध्यम है। इससे भाषा में चमत्कार एवं निखार आ जाता है।''[7]

डॉ. बलदेव जी परम्परागत गीतों में ध्वन्यात्मक बिम्बों का अत्यधिक प्रयोग करते हैं। 'धरती सबके महतारी' की कविता 'गीत–3' में:

कारी–कारी बदरी धिड़के–धिड़के कारी रथिया
रिमझिम–रिमझिम मेघा बरसे कहाँ भीजत हो ही पिया
घनन–घनन ये बादर बाजै सनन–सनन पुरवाई
चारों मुंड़ा ले लउकत हावै गिरै गाज हरजाई
रहि–रहि के धरती काँपे कांपत हो ही कंत पिया।

इन पंक्तियों में उद्घृत वर्ण जैसे– ध, न, र, स आदि की आवृत्ति मीठे सुंदर ध्वन्यात्मक गुंजायमान शैली को प्रकट करते हैं। इसी प्रकार ध्वनि के साथ रंग और धनुष की टंकार की तुलना भँवर के व्यंजित गुंजायमान ध्वनि से किया गया है। कविता 'साल्हे' में बसंती हवाओं में छायी मादकता से पशु–पक्षी को भी झुमते हुए चित्रित किया गया है। बौर की अधिकता से आम वृक्ष विवाह मंडप में अंग–अंग में हल्दी रंगे दुल्हन सी दिख रही है। उसके प्रेम की रस कोयल की कुहकता के माध्यम से वातावरण में गुंज रही है, भंवरे भी उसी रस का पान करके इतने मगन हैं कि उड़ने की ताकत नहीं है और गुंजन भी भूल गए हैं।

कोमल ध्वनियों का प्रयोग काव्य में क्रिया के उत्तेजक रूप को अभिव्यक्त करता है। श्रृंगार रस में आकण्ठ डूबी कविताओं में अनुप्रास की छटा अद्भुत रति बिम्बों की ध्वनि स्फूरित कर देती है। बिम्ब निर्माण में डॉ. बलदेव सिद्ध हस्त कवि थे। भोर के चित्रांकन में कवि ने दृश्य बिम्ब के साथ–साथ ध्वनि का भी सुंदर प्रयोग किया है। अलंकार के अलंकरण में उपमा, रूपक और उत्प्रेक्षा का प्रयोग सुव्यवस्थित ढ़ंग से हुआ है। डॉक्टर साहब कहीं चंदा को कंडिल (लैम्प) की मध्यम् पड़ती बाती से तुलना करते दिख जाते हैं, तो कहीं सुबह की लालिमा युक्त सूर्य की तुलना सुहागन की लाल बिंदिया से करते हैं:

''जगमगात उगे हे सुकवा
टिकली के होवत हावय भोर''

ऋतु वर्णन और नारी सौन्दर्य के चित्रण में डॉ. बलदेव के बिम्बों के प्रयोग उनके अतीन्द्रिय अतुल क्षमता को उद्भाषित करती है। 'धरती सबके महतारी' की 'चिल्हर' कविता की पंक्तियों में ऋतु वर्णन की सुंदरता देखते ही बनती है। चौमास के बाद आसमान अधिक भड़कीला हो जाता है। जिस तरह सर्प अपनी 'केंचुल' गोज निकालने के बाद और अधिक चमकीला–जहरीला हो जाता है, उसी प्रकार चौमास के बाद प्रकृति पहले से अधिक सुंदर हो

उठती है। डॉ. बलदेव की उपमा भी अप्रतिम होती हैं। इसी तरह कविता 'सरगुजा' में सौंदर्य चित्रण देखिएः

''फूल के घाटी लुचकी घाटी
झूमरत हावै अइसे
बीन के आघू कुंडलि मारे
फण फैलाए नागिन जइसे''[8]

कवि ने जिस प्रकार महानदी, केलो नदी, खांडाधर पहाड़, बामदेइ झील, पहाड़ी किला मीलूपारा, लालपुर, बरगढ़ खोला, दलहा पहाड़ आदि का सुंदर बिम्बांकन करते हुए चित्रात्मक शैली में कविता प्रस्तुत की है, उसकी प्रकार की इस कविता में लुचकी घाटी के बिम्बांकन में विराट और अतिद्वय बिम्बों के सार्थक प्रयोग किए हैं। डॉ. बलदेव जी की पद्स्थापना धर्मजयगढ़, (जिला–रायगढ़) में भी थी। वे काफी दिनों तक वहाँ रहे। अद्भुत प्रकृति की सौन्दर्ययुक्त छटा के मध्य बसे इस छोटे से जनपद में रहकर उन्होंने प्रकृति को करीब से जीया है। अंबिकापुर से 1–2 मील पहले स्थित लुचकी घाटी जितनी सौन्दर्ययुक्त है, उतनी ही खतरनाक भी। दुर्घटनाओं से इसका नाता रहा है। ऐसे में उसे बीन के आगे मस्ती में झूमती हुई फण फैलाए अतिकाय नागिन मान लेना अनुचित नहीं जान पड़ता। नागकन्या के समान सुन्दर रूप और साथ में विषैला फन कैसा विरोधाभास प्रकट हुआ है। यह निरीक्षण की सूक्ष्मता की परिणीति है। ऋतु वर्णन में ग्रीष्म ऋतु के चित्रण पर डॉ. बलदेव की किताब 'धरती सबके महतारी' की कविता 'खांड़ाधार पहाड़' के बिम्बांकन पर एक दृष्टि डालेंः

''चाँद म करिया दाग
चमकै सूरज माथा उप्पर
बरसे सोनहा फाग
रवनिया लेवत बइठे हे चील
सोनापांखी बइठे हे चील
डेना तउल मार झपट्टा
चट्टान दबोचे उड़गै चील।।''

कवि ने अतिश्योक्ति अलंकार के माध्यम से बिम्ब–रूपकों का चयन किया है तथा बिम्बों को चिरस्थायी बनाने में सफल प्रतीत होते हैं ।

रस विधान

स्वर्गीय डॉ. बलदेव साव ने लगभग सभी रसों का प्रयोग अपने काव्य में किया है। श्रृंगार पर भी इनकी कविताएँ अद्भुत हैंः

- **श्रृंगार रसः** सहृदय के हृदय में जब रति नामक स्थायी भाव का विभाव, अनुभाव एवं संचारी भाव से संयोग हो, वहाँ 'श्रृंगार रस' का प्रादुर्भाव होता है। रसराज कहे जाने वाले इस रस का स्थायी भाव 'रति' है। इसके दो भेद संयोग श्रृंगार और वियोग श्रृंगार हैः

  (अ) वियोग श्रृंगार की इस कविता में डॉ. बलदेव की नायिका फूलबासन के माध्यम से वियोग का चित्रण करते हैंः

''दहकत परसा, टपकत महुवा, झिम–झिम बाजे ना
धनुखा के टंकार बरोबर भंवरा गाजे ना
आकुल व्याकुल जीव हर लागे, फूल बासन घर आ
गरबैतिन घर आ''

इन पंक्तियों में भाषा की कोमलता और कांतता रस के सौन्दर्य में अभिवृद्धि कर रही है।

(ब) संयोग शृंगार पर डॉ. बलदेव की कविता देखें:

''दुल्हिन डउकी लाज म गड़ि जाय
मुस्की ढारय फेर कइसे बताय
दुधमुंहा देवर पीये बर खोझै
भउजी लजावै अउ कोनहा खोझै''

छत्तीसगढ़ में 'ददरिया' श्रृंगार गीतों का प्रतीक माना जाता है। सृजन के विविध आयामों को स्पर्श करती बहुत ही सुंदर, सारगर्भित और उत्कृष्ठ सृजन डॉ. बलदेव जी ने दिए हैं। कुछ इसी प्रकार दसमत कैना, ददरिया जैसे छत्तीसगढ़ी लोकगीतों में नायिका के रूप श्रृंगार का सजीव वर्णन मिलता है:

''देखे सुन्दरई दसमत कइना के, राजा गइन मोहाय,
सोन मचोलिया के बइठक देवत हे, अऊ मुख बर बंगला के पान
नयना–नयना ला जोहथे बाह्मन देवता, अऊ बदन बदन ले देखथे
अऊ तन मन देवय लगान।।''[9]

- **वीर रस:** सहृदय के हृदय में जब वीर नामक स्थायी भाव का विभाव, अनुभाव एवं संचारी भाव से संयोग हो, वहॉ वीर रस का प्रादुर्भाव होता है। ''जंवारा गीत'' में मां शक्ति की आराधना के परिपेक्ष्य में वीर रस के सुंदर परिपाक उपलब्ध होते हैं:

''ए बैरी मन के कारन खाथे
देस मोर दचक्का
ए महमाई सातों बहिनी,
इनला काबर नइ खावा कच्चा ।
कपटी मन देवत हे चकमा,
जनता खाथे गच्चा।
संसद नहीं अखाड़ा हो गए
चलत हे धक्का–मुक्का।''

- **करूण रस:** सहृदय के हृदय में जब करूणा या शोक नामक स्थायी भाव का विभाव, अनुभाव एवं संचारी भाव से संयोग हो, वहाँ करूण रस का प्रादुर्भाव होता है। अकाल के तर्ज पर डॉ. बलदेव जी ने कविता लिखी। हिन्दी साहित्य में अकाल पर कई कविताएँ आयीं, जैसे नागार्जुन जी की कविता ''अकाल और उसके बाद'':

''कई दिनों तक चूल्हा रोया, चक्की रही उदास
कई दिनों तक कानी कुतिया सोई उसके पास
कई दिनों तक लगी भीत पर छिपकलियों की गश्त
कई दिनों तक चूहों की भी हालत रही शिकस्त।''[10]

डॉ. बलदेव जी की मुलाकात जांजगीर (छत्तीसगढ़) के एक कवि सम्मेलन में नागार्जुन जी से भी हुई थी, जिसमें बाबा नागार्जुन ने डॉ. बलदेव की भी कविता सुनी और आवश्यक सुझाव भी दिए थे। यह बात सन् 1968 के फरवरी महीने की है, जब वे शासकीय उच्चतर माध्यमिक शाला जांजगीर में शिक्षक थे और यह काव्यगोष्ठी राजकीय बुनियादी प्रशिक्षण संस्था के सभा भवन में आयोजित थी। ये सभी बातें डॉ. बलदेव के लेख–''जब बाबा

ने मेरे कान उमेंठे'' में वर्णित हैं। मेरा अभिमत है कि डॉ. बलदेव की लिखी कविता 'अकाल' (प्रकाशन–सन् 1973) बाबा नागार्जुन की 'अकाल और उसके बाद' से प्रेरित है। ''हमर धरती माँ'' में 'अकाल–1973', 'अकाल–1979' और 'अकाल' शीर्षक से तीन कविताएँ हैं, जो पूरी तरह कारूणिक हैं:

"भांय भांय करत हे कोठा–कुरिया
अन्नकुंवारी बिना
ढेंकी का बाजही
अन्न कुंवारी बिना
का चलही चूल्हा
अन्न कुंवारी बिना
हांव–हांव करत हे लइका सियान
अब कहां भागों कहाँ जांव
चिन्हारी बिना'"

इसी प्रकार 'अकाल' की अन्य कविता में बलदेव जी वर्णित करते हैं कि बज्र अकाल के दिनों में प्रकृति आग उगलती है। नदी नालों में जल का नामोनिशान नहीं फिर जीव–जंतुओं के प्राणों की रक्षा कैसे होगी?

- **शांत रस:** सांसारिक मायामोह से मुक्ति के बाद मन चित का परमात्मा की ओर उन्मुख होते ही मानसिक शान्ति से प्राप्त रस ही 'शान्त रस' कहलाता है, जिसका स्थाई भाव निर्वेद बताया गया है। कवि रामभजन की कुंडलियों से शान्त रस का एक उदाहरण है:

''हे प्रभो सुख के दाता, हमको दीजिए ज्ञान
सदाचारी हमें बना, ले लो शरण अजान
ले लो शरण अजान, हम सब बने ब्रतधारी
धर्मरक्षक पर हितु, बने वीर न्यायकारी
कहत 'भजन' कविराय, ज्ञान की करै बात जो
सब मिल–जुल कर रहे, दुख के नाशक हे प्रभो''[11]

डॉ. बलदेव जी ने शांत रस आधारित 'हमर धरती माँ' में कविताएँ कम हैं, किंतु लगभग सभी रसों का परिपाक उनकी कविताओं में दृष्टिगोचर होते हैं। डॉ. बलदेव की कविता 'ए ददा' से:

''हम कउन आन दुख के गोहरइय्या
तोर सिवा कोन हमर गोसइय्या
हमर का अवकात ,हम कउन आन
तोर करा फरियाद करइय्या
कछु कर हम बोलन नही''

- **अद्भुत रस:** अलौकिक या विचित्र प्रसंग को देख कर या सुन कर जब विस्मय नामक स्थायी भाव पुष्ट होता है, वहां 'अद्भुत रस' का प्रादुर्भाव होता है। व्यंग्यात्मक शैली में मकड़ी को हाथों–हाथ लेते हुए लक्षणा शब्द शक्ति पर आधारित डॉ. बलदेव की कविता पर विचार डालते हैं, जो कि 'नारी का संबल पत्रिका' में 2002 में छपी थी:

''जे परे हावै जाल–जंजाल म मेंकरा वोहीच लीलत हे,
न जरत हे न मरत हे अम्मर मेंकरा आगी म रेंगत हे

झाड़ बोहार उझाल देया रेसमी जाल फेर बुनत हे
अकास म सूरज ल बुनत हे मेंकरा ह हवा म झूलत हे।।''[12]

- **हास्य रसः** विकृत रूप, घटना, वेष, वाणी, आकार, चेष्ठाओं आदि को देख–सुन कर सहृदय के हृदय में हास्य नामक मनोविकार के पुष्ट होने से 'हास्य रस' की निष्पत्ति होती है। यथार्थ तथ्य को उधेड़ते–उधेड़ते चरम पर हास्य में पहुँच जाना कवि की विशेषता है। हास्य के दो टूक जीवन को खुशनुमा कर जाते हैं:

''मुझे दोबारा चाय पीने की आदत है, जो स्पेशल है
पहली पब्लिक चाय थी सीठी और बासी दूध की
इसलिए गाने का सिलसिला रूक गया था
अब दूधवाला आये तो स्पेशल मिले और
गीत पंक्तियाँ आगे बढ़े
रेड लेबिल की महक शायद कोई पंक्ति खड़ी कर दे''[13]

परिवेश, भाव एवं अन्य

डॉ. बलदेव की छत्तीसगढ़ी कविताएँ यत्र तत्र पत्र–पत्रिकाओं में विविध रूपों में विविध परिवेश को उजागर करती हुए मिल जाएँगी। पुस्तककार रूप में लोकाक्षर प्रकाशन द्वारा प्रकाशित 'धरती सबके महतारी' (72 कविताएँ) एवं अप्रकाशित कृति ''हमर धरती माँ'' (157 कविताएँ) प्राप्त होती है। इसी क्रम में फिराक गोरखपुरी के नाती 'कवि विश्वरंजन' की हिन्दी कविताओं के छत्तीसगढ़ी भावानुवाद हमें प्राप्त होते हैं। छत्तीसगढ़ में पुलिस अधीक्षक रह चुके कवि विश्वरंजन जी मूलतः बिहार से संबद्ध हैं। उनकी महत्वपूर्ण काव्य संग्रह– ''स्वप्न का होना बेहद जरूरी है'' एवं ''कुछ अन्य महत्वपूर्ण कविताएं'' को लेकर डॉ. बलदेव जी ने वैभव प्रकाशन रायपुर, (छत्तीसगढ़) से वर्ष 2010 में छत्तीसगढ़ी में अनूदित कविता–संग्रह प्रस्तुत किया था, जिसे 'विश्वरंजन के कविता संसार' का नाम दिया है। प्रायः हम छत्तीसगढ़ी कविताओं में ग्रामीण परिवेश पाते हैं, परंतु डॉ. बलदेव के इस अनूदित साहित्य में हम शहरी परिवेश के स्पंदन की ध्वनि की गुंजाएमान पाते हैं। उनकी कविताएँ ग्रामीण, शहरी स्तर से होते हुए राष्ट्रीय–अंतर्राष्ट्रीय समस्याओं को स्पर्श करने में भी हिचकती नहीं हैं। 'साहब', 'बाजार', 'क्लब घर' को लेकर कई रचनाएँ गढ़ी गई हैं। कविता– 'साहब कथे वोहर सब कुछ ल जानथे' की पंक्तियों से:

''साहब कथे
जेहर वोकर संग गोठियात बतरात
रूस अउ चीन
चीन अउ रूस
माओ–लेनिन–मार्क्स
मार्क्स–लेनिन–माओ
सब कुछ बोल जाथे एक्के संग
वो साला हर कम्युनिस्ट आय
कुछ करै न धरै
गोठेच भर आय वोकर''[14]

भावानूदित काव्यों का विवेचन

बिहार के गया में 1 अप्रैल 1950 को पैदा हुए कवि विश्वरंजन जी 1973 के आई. पी. एस. है। वे विख्यात् शायर फिराक गोरखपुरी के नाती हैं। सन् 1974–1985 के बीच पुलिस अधीक्षक के रूप में छत्तीसगढ़ के कई स्थलों

जैसे–रायपुर, रायगढ़, बस्तर आदि में विश्वरंजन जी पदस्थ रहे। सन् 1985–2006 भारत सरकार में प्रतिनियुक्ति पर विभिन्न महत्वपूर्ण पदों एवं आंतरिक सुरक्षा कार्यों मे दिल्ली, गुजरात, बिहार में भी पदस्थ रहें। प्रधानमंत्री के सराहनीय पुलिस सेवा तथा राष्ट्रपति के विशिष्ट सेवा पदकों से वे सम्मानित हो चुके हैं। उच्च पदों में रहने के अलावा विश्वरंजन जी एक श्रेष्ठ एवं उन्नत कवि हृदय भी रखते हैं। देश के लगभग कई महत्वपूर्ण साहित्यिक पत्र–पत्रिकाओं में उनकी कविताएं छप चुकी हैं। डॉ. बलदेव जी ने इनकी कविताओं का छत्तीसगढ़ी अनुवाद ''कवि विश्वरंजन के कविता संसार'' नामक संग्रह में प्रस्तुत किया है।[15] डॉ. बलदेव जी ने इसमें 12 पृष्ठों की भूमिका दी है। पुस्तक पर दृष्टि डालने पर सुशील भोले जी का यह कथन सत्य ही प्रतीत होता है–''डॉ. बलदेव साव जी सही मायने म इहाँ के साहित्य अउ साहित्यकार मन के धारनखंभा रिहिन हें, कतकों नवा अउ जुन्ना साहित्यकार मनला साहित्य जगत म चिन्हारी देवा के स्थापित करिन।''[16]

डॉ. बलदेव कवि विश्वरंजन जी को मूल रूप में गांधीवादी कवि मानते थे, लेकिन बलदेव जी यह भी लिखते है कि हिंसा के समाधान म लगे रहथे फेर जदि कायरता अउ हिंसा म कोनों एक के चुनाव करना परही त वो हिंसा के ही चुनाव करथे काबर 'विषय विषस्यौषधम्'। बुद्ध के अहिंसा कभू–कभू ढाल भी बन जाथे, परंतु बुद्ध के प्रतिमा हर अइसन खतरनाक मन्से मन के ड्राइंग रूम के सुघराई लोक ल बिगाड़ देथे।

यह पंक्ति हमें सीधे प्रसिद्ध उपन्यास ''तमस'' के रिचर्ड के ड्राइंग रूम की याद दिला जाती है। भीष्म साहनी जी ने बुद्ध के होठों की कोरों और उस पर फोकस प्रकाश को बेहतरीन ढंग से रेखांकित किया, पर वह प्रकाश रिचर्ड के अंतर्मन में न फैल पाई।

संस्कृति, संस्कार और साल वनों का प्रवेश बस्तर लाल सलाम से रंग गया है। नक्सलवाद, आतंकवाद, सांप्रदायिकता, कुत्सित राजनीति, पूँजीवाद पर कवि विश्वरंजन कविताओं के तीखे प्रहार करते हैं:

''वो कथे अजुद्धा लुकाय हे लास म
मैं कंथव–गोधरा
वो कथे लखनउ लुकाय हे लास म
मैं चिल्लाथंव अहमदाबाद

एकर विस्तार सरी दुनिया म होत हेः

वो कथे समूचे बगदाद हे लास
फेर मैं चीखथंव– 11 सितम्बर अउ अमेरिका....।''[17]

राजनीति के तवे में अपनी रोटी सेकने वालों पर कवि की कटाक्ष दृष्टि हैं। मेहनतकश मजदूर के प्रति विश्वरंजन की कविताओं में पर्याप्त करूणा की दृष्टि है। देश के नौंनिहालों, डिग्रीधारी नवयुवकों के खाली हाथ, आधुनिकता के शिकार जिन्दगी पर कवि की सूक्ष्म दृष्टि है। डॉ. बलदेव उन्हें प्रखर आशावादी कवि घोषित करते हैं। इस संग्रह की पहली कविता साहब एक दीर्घ कविता है। साहब के खर्चीले व्यय और उनकी बीबियों के अपव्यय पर व्यंग्य है।

डॉ. बलदेव नक्सलवाद और सांप्रदायिक उन्माद की उत्पत्ति का मूल कारण अशिक्षा को ही मानते है। यही विषमता आगे चलकर आतंकवाद के पनपने का कारण बनती हैं। इन सब के मूल में होती है आर्थिक विषमता और पूंजीवाद के विस्तार की नीति। ये आज धर्म को हथियार के समान उपयोग कर रहे हैं। इन अदृश्य हथियारों से व्यक्ति की आत्मा का, उसके आत्मविश्वास का हनन हो रहा है। धर्म के नाम पर खुले आम राजनीति हो रही है। विश्वरंजन जी के साहित्य में 'सर्व धर्म समभाव' की उद्घोषणा विद्यमान है। वे विश्व में शांति–स्थापना के इच्छुक हैं। वे प्रकृति का सानिध्य चाहते हैं। बारूद के ढेर पर खड़े समाज की कल्पना से ही वे व्यथित हैं। अंधकार और प्रकाश के द्वन्द्व में विश्वरंजन सच्चाई की तलाश में हैं। डॉ. बलदेव मानते हैं, कि विश्वरंजन निषेध के कवि नहीं अपितु वे

सर्जन के कवि कहे जा सकते हैं। वे अदम्य विश्वास से परिपूर्ण हैः

''मैं हर सांस मन के चुप्पी म
नव मन के सहर ल/अंधियार ल फोरत देखे हंव
एक उजियारा/सदियों ले बंद हे
जेहर एक साथ फट परही आज
फैले बर चारों मुड़ा असमान म।''[18]

विश्वरंजन रक्तक्रांति के समर्थक भी हैं। उनका मानना है, कि ''बिना रक्तक्रांति के नवा सहर नइ बस पावै।'' वे प्रत्येक मनुष्य को अपने अंतस में क्रांतिबीज बोने की प्रेरणा देते हैं। आज अपने हक के प्रति आवाज उठाने में कोई अनीति नहीं। विश्वरंजन प्रबुद्ध साहित्यकार हैं, उनके गंभीर, मार्मिक भावाभिव्यक्ति और शब्दों का संयोजन प्रभावशाली है। शब्दों का आसंजन (जोड़ना) ऊर्जा प्रदात्री का कर्म करती है। कहीं व्यंग्यात्मक शैली में यथार्थ को चित्रित कर देते हैं, तो कहीं मृदुल मनभावन अनुपम सौम्य कृतियों से हृदय आह्लादित हो उठता है। अनेक स्थलों पर ओजपूर्ण, देशभक्त के भावों से परिपूर्ण राष्ट्र के शान और शौर्य को शब्दों के रूप में बखूबी पिरोया है। विश्वरंजन बिना लाग लपेट के खरीखरी अपनी बात प्रस्तुत कर देते हैं। उनकी यही विशेषता उन्हें लोकप्रिय भी करती है। बदलते वक्त के साथ गद्य लेखन के वृहद संसार भी विषयों में आए हैं। प्राकृतिक परिदृश्य और सांस्कृतिक मेलजोल को समझने गद्य जितने महत्व रखते हैं, उसका विकल्प अन्यत्र नहीं।

निष्कर्ष

डॉ. बलदेव की कविताएँ हमें हमारे अस्तित्व का परिचय कराती हैं साथ ही उनकी आधुनिक कविताएँ भविष्य का प्रतिरूप भी दिखाती हैं। वे काव्य के भावपक्ष और कलापक्ष को महत्वपूर्ण मानते थे, नए कवियों को उनसे प्रेरणा लेने की आवश्यकता है। बलदेव जी कपोल कल्पनाओं में मग्न रहने वालों में से नहीं थे। उनके विचार सुस्पष्ट और निष्कर्ष तर्कपूर्ण हैं। उनके समग्र साहित्य से छत्तीसगढ़ी उन्नत और समृद्ध हो रही है। गुणग्राही डॉ. बलदेव समाज के उज्जवल पक्ष की ओर एक नवीन दृष्टिकोण से देखने का आग्रह करते हैं। हमें उनके साहित्य से प्रेरणा लेने की आवश्यकता है। उनका गहन अध्ययन जीवन दर्शन के गूढ़ रहस्य को उजागर करने में सक्षम हैं। छत्तीसगढ़ी शब्दकोष को समृद्ध करने का काम डॉ. बलदेव ने किया है। उनके 'जंवारा गीत' में जहाँ देवी के शक्तिरूप की आराधना है, वहीं 'ददरिया' में श्रृंगार चरम पर होते हुए भी सधे शब्दों में है। 'करमा नाच' की कविताओं में झांझ–मृदंग और किरकिची के ध्वनि की अनुभूति की जा सकती है। ओड़िसा से लगे रायगढ़ के इलाकों में 'करमा नृत्य' विशेष प्रचलन में है। छत्तीसगढ़ में प्रत्येक गोत्र विशेष के द्वारा कोई विशेष देवी या देवता की आराधना की प्राचीन परंपरा चली आ रही है। उनकी पूरा–अर्चना के अलग–अलग विधि–विधान होते हैं जो उस गोत्र के प्रमुख व्यक्ति या मुखिया के द्वारा निर्वाह की जाती है। छत्तीसगढ़ के संस्कृति में आज भी कई प्रथाएँ प्रचलित हैं, जिन्हें डॉ. बलदेव की छत्तीसगढ़ी कविताओं में देखा जा सकता है। डॉ. बलदेव की पांडुलिपि 'हमर धरती माँ' का प्रकाशन इस दृष्टि से बहुत आवश्यक हो जाता है। हालांकि उसकी कई कविताएँ डिजिटल पटल पर आ चुकी हैं, किंतु किताब का अपना अलग महत्व होता है।

संदर्भ सूची

1. बलदेव (2002), *धरती सबसे महतारी,* लोकाक्षर प्रकाशन, बिलासपुर, प्रथम संस्करण पृ. 13।
2. बलदेव (2010), *छत्तीसगढ़ी कविता के सौ साल,* वैभव प्रकाशन, रायपुर, प्रथम संस्करण पृ. 324।
3. शुक्ल, डदयाशंकर (1969), *छत्तीसगढ़ी लोक साहित्य का अध्ययन,* ज्योति प्रकाशन, रायपुर पृ. 46।
4. कोरे, सुलभा श्रीकांत (2018), *यूनियन सृजनः भाषा और बोली,* विशेषांक मुंबई, जुलाई–सितंबर पृ.14।

5. बलदेव (2013), *छत्तीसगढ़ काव्य के कुछ महत्वपूर्ण कवि,* वैभव प्रकाशन, रायपुर, प्रथम संस्करण पृ. 01 (प्रवेश)।
6. बलदेव (2013), *छत्तीसगढ़ काव्य के कुछ महत्वपूर्ण कवि,* वैभव प्रकाशन, रायपुर, प्रथम संस्करण, पृ. 224।
7. निर्मलकर, स्नेहलता (2022), *छत्तीसगढ़ी लोकगाथा की परम्परा और दसमत कैनाः एक विवेचन,* प्रथम संस्करण, नीरज बुक सेंटर, दिल्ली, पृ. 290।
8. पाठक, सुधीर (2004), 'सरगुजा' कविता, *गागर,* अंक 2, जनवरी पृ. 45।
9. निर्मलकर, स्नेहलता (2022), *छत्तीसगढ़ी लोकगाथा की परम्परा और दसमत कैनाः एक विवेचन,* प्रथम संस्करण, पृ. 209।
10. बलदेव (2013), *छत्तीसगढ़ काव्य के कुछ महत्वपूर्ण कवि,* वैभव प्रकाशन, रायपुर, प्रथम संस्करण पृ. 125।
11. पटेल, रामभजन (2019), *रामभजन छंद सरिता,* भाग–एक, प्रथम संस्करण, वैभव प्रकाशन, रायपुर पृ. 204
12. तरार, शकुंतला (अक्टुबर–दिसम्बर 2002), नारी का संबल, *पत्रिका,* पृ. 16।
13. भट्टाचार्य, शेफाली (मार्च 2010), *छत्तीसगढ़ आस–पास,* अंक–31, (7) पृ. 25।
14. बलदेव (2010), *कवि विश्वरंजन के कविता संसार,* वैभव प्रकाशन, रायपुर, प्रथम संस्करण, पृ. 22।
15. बलदेव (2010), *कवि विश्वरंजन के कविता संसार,* वैभव प्रकाशन, रायपुर, प्रथम संस्करण, पृ. 46।
16. वर्मा, परदेशीराम (2019), *आवा,* प्रथम संस्करण, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 39।
17. बलदेव (2010), *कवि विश्वरंजन के कविता संसार,* वैभव प्रकाशन, रायपुर, प्रथम संस्करण, पृ. 09।
18. बलदेव (2010), *कवि विश्वरंजन के कविता संसार,* वैभव प्रकाशन, रायपुर, प्रथम संस्करण, पृ. 16–17।

****